भूमिका

मेरा प्रस्तावित लघु शोध विषय ***'गायब होता देश' और 'जंगल के दावेदार' में आदिवासी जीवन की चुनौतियाँ*** है। इस विषय की मूल समस्या आदिवासी जीवन की चिंताएँ हैं, जो मेरे द्वारा चयनित उपन्यासों में भली-भांति प्रकट हुई हैं। भूमंडलीकरण के इस दौर में जीवन कैसे मृत्यु में बदल रहा है इस बात पर ध्यान कम ही लोगों का गया है। इसी भूमंडलीकरण के कारण आदिवासी एक स्थान से दूसरे स्थान पर विस्थापित होने को मजबूर होते जा रहे हैं। इनके लिए अनगिनत कानून बनाए गए हैं पर उन कानूनों का कितना पालन हो रहा है यह बड़ा सवाल है। 'आधुनिक' दौर में बड़े पदों पर आसीन महानुभावों को इस बात की फिक्र है कि विकास की होड़ में यह तबका कहीं पीछे न रह जाए लेकिन सही अर्थों में देखा जाए तो उनकी नहीं, जो आधुनिक बनने व बनाने के दबाव में अपने जीवन की आहुति देते जा रहे हैं, और अपने घरों से विस्थापित होते जा रहे हैं।

आज के दौर में विचार और शैलियाँ जीवन को जो अर्थ देने लगी हैं, आदिवासी उसमें ठगे से रह गए हैं। विकास की रफ़्तार जरूरी है पर यह सवाल है कि यह विकास किसके लिए ? और किस कीमत पर ? संदर्भित उपन्यासों का मूल विचारणीय बिंदु यही है। दोनों उपन्यासों में रचनाकारों ने आदिवासी समाज की समस्याओं को उद्घाटित किया है। इसमें चित्रित आदिवासी मुंडा समाज को केंद्र में रख कर उनकी समस्याओं को तुलनात्मक अध्ययन के ज़रीये शोध का विषय बनाया गया है।

समकालीन साहित्य में आदिवासी, स्त्री, दलित और अल्पसंख्यक लम्बे समय तक हाशिये पर रहे हैं। आज उत्तर आधुनिकता से प्रेरित होकर ये एक बड़े विमर्श के रूप में हमारे समक्ष उपस्थित हैं। आज आदिवासी समाज की संस्कृति, भाषाएँ व उनका

सम्पूर्ण जीवन संकट ग्रस्त है और यही इस विमर्श के केंद्र में है ।'गायब होता देश'में उपन्यासकार (रणेन्द्र) ने इस उपन्यास में आदिवासी मुंडा समाज की समस्याओं की ओर हमारा ध्यान केन्द्रित किया है।

'जंगल के दावेदार' (महाश्वेता देवी) उपन्यास बांग्ला में 'अरण्येर अधिकार' के नाम से 1975 लिखा गया था जिसका अनुवाद हिंदी में 'जंगल के दावेदार' शीर्षक से 1998 में प्रकाशित हुआ । इसके लिए महाश्वेता देवी को ज्ञानपीठ पुरस्कार से सम्मानित किया गया। महाश्वेता जी आदिवासी जीवन की चुनौतियों को बड़े करीब से अनुभव कर चुकी हैं । इस उपन्यास में आज़ादी के समय हाशिये पर रहे आदिवासियों के विद्रोह की महागाथा है, जिसका नायक बिरसा मुंडा है। इसमें आदिवासी जीवन अपने अस्तित्व के खतरे को लेकर उपस्थित हुआ है, जिसका कारण दिकू (गैर आदिवासी) है।

मैंने अपने लघु शोध-प्रबंध को तीन अध्याय में विभाजित किया है, जो क्रमशः प्रथम अध्याय आदिवासी एक परिचय, द्वितीय अध्याय आदिवासियों की औपन्यासिक स्थिति, तृतीय अध्याय 'गायब होता देश' और 'जंगल के दावेदार' में आदिवासी जीवन की चिंताएं हैं। प्रथम अध्याय में आदिवासी शब्द से अभिप्राय, आदिवासी के स्वरूप और आदिवासी मुंडा समाज और उसकी संस्कृति का वर्णन-विश्लेषण प्रस्तुत किया गया है। द्वितीय अध्याय में महाश्वेता देवी के उपन्यास 'जंगल के दावेदार' और रणेन्द्र के उपन्यास 'गायब होता देश' में चित्रित आदिवासी समाज की आर्थिक, सामाजिक, सांस्कृतिक, धार्मिक, राजनीतिक और प्रशासनिक स्थिति का वर्णन किया गया है। तृतीय अध्याय में दोनों उपन्यास 'गायब होता देश' और 'जंगल के दावेदार' में आदिवासी जीवन की चिंताओं का वर्णन विश्लेषण किया गया है । लघु शोध प्रबंध में मुख्य बात यह है कि बंगाली आदिवासी साहित्य की धरोहर 'जंगल के दावेदार' और हिंदी आदिवासी साहित्य

में नवोदित उपन्यास 'गायब होता देश' के माध्यम से दो कालखंडो के साहित्य में उपस्थित आदिवासी समाज का तुलनात्मक अध्ययन प्रस्तुत किया गया है।

मेरे इस लघु शोध-प्रबंध को पूरा करना एक चुनौती साबित हुआ, क्योंकि जिन उपन्यासों का तुलनात्मक अध्ययन प्रस्तुत करना था वे दोनों उपन्यास दो अलग-अलग साहित्य जगत, परिवेश, और समाज से संबंधित है। दोनों उपन्यास दो अलग कालखण्डों की उपज है।

इस लघु शोध-प्रबंध के प्रस्तुतीकरण के लिए मैं अत्यंत कृतज्ञता पूर्वक अपने निर्देशक डॉ. अशोक नाथ त्रिपाठी की आभारी हूँ, जिन्होंने अध्ययन-अध्यापन कार्यों में व्यस्त रहने पर भी सहानुभूति और संयम के साथ शोध निर्देशक की भूमिका निभाई है, इसके लिए आभार व्यक्त करना मात्र औपचारिकता है। मैं निर्देशक को विशेष रूप से अपनी कृतज्ञता प्रकट करती हूँ।

इस लघु-शोध प्रबंध के संदर्भ में हिंदी एवं तुलनात्मक साहित्य विभाग के विभागाध्यक्ष प्रो. सूरज पालीवाल एवं साहित्य विद्यापीठ के संकायाध्यक्ष प्रो कृष्ण कुमार सिंह सहित सभी अध्यापकों के प्रति श्रद्धानत हूँ, विशेष कर रूपेश सर का जिन्होंने बीच-बीच में बात-चीत कर शोध में आ रही समस्याओं का समाधान किया।

मेरे प्रिय मित्र अनु सुमन बड़ा, गौरव वर्मा, गरिमा दीदी का भी धन्यवाद देना चहूँगी जिन्होंने अपना कीमती समय दिया और मेरा उत्साह वर्धन किया और अपने अनुजों का भी धन्यवाद करना चाहूँगी जिनका मुझे समय-समय पर सहयोग मिला। अपने विश्वविद्यालय के पुस्तकालय कर्मियों का भी एवं अपने विभाग का विशेष रूप से धन्यवाद करना चाहूँगी।

इस लधु शोध को मैं अपने आदरणीय माता-पिता को समर्पित करती हूँ, यह जिनके स्नेह और आशीर्वाद का प्रतिफल है।

ललिता गुप्ता